वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

अपनी बात

शिवांश सिंह

मानवीय मूल्यों की स्थापना, वैचारिक शुद्धता और संस्कारित समाज के निर्माण का मार्ग कभी सरल नहीं रहा। यह एक सतत साधना है, जिसमें समर्पण, धैर्य और दूरदृष्टि की आवश्यकता होती है। किन्तु जब कोई व्यक्तित्व इस कठिन पथ पर निरन्तर अग्रसर रहते हुए स्वयं एक संस्था का स्वरूप ग्रहण कर ले, तब वह केवल व्यक्ति नहीं रहता—वह विचार, प्रेरणा और सामाजिक चेतना का केन्द्र बन जाता है। शिव नारायण सिंह जी ऐसे ही व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने शिक्षा, साहित्य, संस्कृति और सामाजिक जागरण के क्षेत्र में अपने दीर्घकालिक योगदान से एक जीवंत प्रेरणा-स्तंभ का रूप धारण किया है।

उनका व्यक्तित्व उस विशाल वटवृक्ष के समान है, जिसकी छाया में ज्ञान का विकास होता है, संस्कारों का पोषण होता है और जीवन को दिशा मिलती है। वे मानते हैं कि मनुष्य का वास्तविक मूल्यांकन उसकी उपाधियों, पदों या बाहरी उपलब्धियों से नहीं, बल्कि उसकी संवेदनशीलता, करुणा, नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व से होना चाहिए। उनके चिन्तन का केन्द्र सदैव यही रहा है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल आजीविका अर्जित करना नहीं बल्कि ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना है जो समाज, संस्कृति और राष्ट्र के प्रति अपनी भूमिका को समझ सके।

उनकी दृष्टि में यदि शिक्षा व्यक्ति को मानवीय मूल्यों, सामाजिक सरोकारों और सांस्कृतिक चेतना से नहीं जोड़ती, तो वह अधूरी है। वे बार-बार इस बात पर बल देते हैं कि विद्यार्थियों के भीतर अपने देश, अपनी संस्कृति, अपनी परम्पराओं और अपने नैतिक आदर्शों के प्रति सम्मान का भाव जागृत होना चाहिए। केवल बौद्धिक दक्षता पर्याप्त नहीं; उसके साथ संवेदनशीलता और चरित्र का संतुलन भी अनिवार्य है।

आज का समय तीव्र सूचना-प्रवाह, तकनीकी विस्तार और वैश्विक प्रतिस्पर्धा का युग है। ज्ञान के साधन बढ़े हैं, परन्तु इसके साथ-साथ मूल्यबोध, मौलिकता और नैतिक सन्तुलन के संकट भी गहराए हैं। ऐसे समय में शिव नारायण सिंह जी का चिन्तन हमें अपनी जड़ों की ओर लौटने का सन्देश देता है। वे भारतीय ज्ञानपरम्परा, साहित्य और बोधकथाओं को केवल अतीत की धरोहर नहीं मानते, बल्कि वर्तमान और भविष्य के नैतिक पुनर्निर्माण का सशक्त साधन मानते हैं।

'बोधकथा शोध संस्थान' तथा 'शोध–बोध' पत्रिका इसी उद्देश्य की सार्थक अभिव्यक्ति हैं। इन माध्यमों से वे निरन्तर यह सन्देश देते रहे हैं कि शोध केवल अकादमिक उपलब्धि नहीं, बल्कि समाजोपयोगी चेतना का विस्तार होना चाहिए। ज्ञान तभी सार्थक है जब वह लोककल्याण से जुड़ सके। उनका मानना है कि विद्यालय केवल पाठ्यक्रम पूर्ण करने का स्थान नहीं, बल्कि संवेदना, अनुशासन और जीवन-दृष्टि विकसित करने का केन्द्र होना चाहिए। वे शिक्षकों को केवल अध्यापक नहीं, बल्कि संस्कार-निर्माता मानते हैं। इस दृष्टि से उनका साहित्य शिक्षण-जगत के लिए विशेष महत्त्व रखता है।

शिव नारायण सिंह जी की बोधकथाएँ केवल मनोरंजन या साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि जीवनबोध, विवेकबोध, नीतिबोध और संवेदनात्मक जागरण का माध्यम हैं। उनकी 'विद्यार्थियों से...' ग्रंथमाला बाल एवं युवा पीढ़ी के व्यक्तित्व निर्माण की दिशा में एक अभिनव और अनुकरणीय प्रयास है।

सरल, सहज और किस्सागोई शैली में बोली गई ये कथाएँ विद्यार्थियों को जीवन के गूढ़ सत्यों से परिचित कराती हैं। इन कथाओं के माध्यम से वे यह स्थापित करते हैं कि साहित्य का वास्तविक उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण है। विशेष रूप से बाल्य और किशोरावस्था में यदि साहित्य के

माध्यम से नैतिक मूल्यों का संस्कार प्रदान किया जाए, तो समाज की भावी संरचना अधिक सुदृढ़ हो सकती है। यही कारण है कि उनकी रचनाएँ शिक्षकों, विद्यार्थियों और अभिभावकों सभी के लिए प्रेरक सिद्ध होती हैं।

अनुशासन के विषय में भी उनका दृष्टिकोण अत्यंत स्पष्ट और व्यावहारिक है। वे अनुशासन को बाहरी दबाव नहीं, बल्कि आत्म-विकास की अनिवार्य प्रक्रिया मानते हैं। उनके अनुसार, जब व्यक्ति अपने उद्देश्य, कर्त्तव्य और आदर्शों के प्रति समर्पित होता है, तब अनुशासन उसके व्यक्तित्व का स्वाभाविक अंग बन जाता है। आज जब समाज में त्वरित सफलता की प्रवृत्ति बढ़ रही है, वे साधना, धैर्य और निरन्तर परिश्रम को सफलता का वास्तविक आधार मानते हैं। उनका जीवन स्वयं इस सत्य का प्रमाण है कि स्थायी उपलब्धियाँ केवल समर्पण और मूल्यनिष्ठा से प्राप्त होती हैं।

भारतीय शिक्षा परम्परा में गुरु को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला मार्गदर्शक माना गया है। शिव नारायण सिंह जी इसी परम्परा के जीवंत प्रतिनिधि प्रतीत होते हैं। वे शिक्षा को सूचना नहीं, बल्कि चेतना का जागरण मानते हैं। उनका समूचा कार्य इसी भाव पर आधारित है कि व्यक्ति के भीतर छिपी संभावनाओं को सही दिशा, संस्कार और प्रेरणा के माध्यम से विकसित किया जा सकता है।

'शोध–बोध' पत्रिका का मूल उद्देश्य भी इसी विचारधारा को आगे बढ़ाना है। यह केवल शोध-पत्रों का मंच नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति, साहित्य, दर्शन और समाजोपयोगी चिन्तन को नई पीढ़ी तक पहुँचाने का माध्यम है। यहाँ शोध का अर्थ केवल शैक्षणिक औपचारिकता नहीं, बल्कि समाज, संस्कृति और मानवीय मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम आधुनिकता और परम्परा के बीच सन्तुलन स्थापित करें। पश्चिम की वैज्ञानिक प्रगति का स्वागत करते हुए भी हमें अपनी सांस्कृतिक आत्मा को सुरक्षित रखना होगा। शिव नारायण सिंह जी का चिन्तन इसी समन्वय का समर्थक है। वे भारतीय आध्यात्मिकता, सांस्कृतिक मूल्यों और आधुनिक शोध-दृष्टि के समन्वय को भविष्य का मार्ग मानते हैं।

उनका जीवन और कार्य हमें यह सिखाता है कि नेतृत्व का अर्थ केवल अधिकार नहीं, बल्कि सेवा है शिक्षा का अर्थ केवल रोजगार नहीं, बल्कि व्यक्तित्व निर्माण है और साहित्य का अर्थ केवल अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि समाज को दिशा देना है। निस्संदेह, उनका चिन्तन और सृजन हमें यह बोध कराता है कि सच्ची शिक्षा वही है जो मनुष्य को बेहतर मनुष्य बनाए, और सच्चा शोध वही है जो समाज को नई दिशा प्रदान करे। यही शोध का बोध है, यही साहित्य का उद्देश्य है, और यही हमारे सांस्कृतिक भविष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता भी।

आज की पीढ़ी को साधना और सिद्धि के बीच के अंतर को समझना होगा। बिना साधना के प्राप्त हुई सिद्धि टिकती नहीं है। बोधकथा शोध संस्थान का मूल मंत्र यही है यहाँ शोधार्थियों के भीतर उस धैर्य का विकास किया जाता हैं, जो उन्हें प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अडिग रहने की शक्ति देता है। शिव नारायण सिंह जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से यह उद्भाषित है कि सफलता कोई मंजिल नहीं, बल्कि एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। वहीं उन्होंने शिक्षा जगत को जो नया स्वरूप दिया है, वह केवल बौद्धिक विकास का नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और सामाजिक रूपान्तरण का मार्ग है।

इस स्तंभ के माध्यम से हम शिव नारायण सिंह जी के इसी प्रेरणास्पद जीवन-दर्शन को आत्मसात् करते हैं। उनका कार्य शिक्षा, साहित्य और समाज के क्षेत्र में उन मूल्यों की पुनर्स्थापना का महत्त्वपूर्ण प्रयास है, जिन पर एक स्वस्थ, संवेदनशील और सशक्त राष्ट्र की आधारशिला निर्मित होती है।

16.03.2026 शिवलोक, गोरखपुर (उ.प्र.)